नईदुनिया



## संपादकीय

# ई-कचरे का जहर और सोया सिस्टम

**भोपाल** *में ई-कचरे का जहर किस तेजी से बढ़ रहा है, इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि छह साल में यह दस गुना हो गया है। एनजीटी ने पांच सदस्यीय जांच समिति का गठन किया है और केवल दस प्रतिशत ई-कचरे का ही वैज्ञानिक निस्तारण हो रहा है। यह आंकड़ा नहीं, बल्कि चेतावनी है कि हम अपने ही घर में अपने हाथों से जहर पैदा कर रहे हैं और उसे खुले में फेंककर खुद ही सांस ले रहे हैं। एनजीटी ने राजधानी में ई-कचरे के अवैज्ञानिक और अनियंत्रित निस्तारण पर गंभीर चिंता व्यक्त करते हुए मध्य प्रदेश सरकार, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, भोपाल नगर निगम और अन्य संबंधित विभागों से जवाब तलब किया है। जांच और जमीनी कार्रवाई की तथ्यात्मक रिपोर्ट चार सप्ताह में पेश करने के लिए पांच सदस्यीय विशेषज्ञ समिति बनाई गई है।*

*शहर में फैली लगभग 250 अनाधिकृत स्क्रैप यूनिट्स द्वारा बाकी कचरे को अवैध रूप से छांटा और नष्ट किया जा रहा है। मध्य प्रदेश देश का नौवां सबसे बड़ा ई-कचरा उत्पादक राज्य बन गया है। मोबाइल, कंप्यूटर और अन्य इलेक्ट्रॉनिक सामानों को खुले में जलाने या अनुचित तरीके से नष्ट करने से हवा, पानी और मिट्टी में सीसा, पारा, कैडमियम और क्रोमियम जैसे जहरीले तत्व घुल रहे हैं। यह प्रदूषण गुर्दे, फेफड़ों और मस्तिष्क को गंभीर नुकसान पहुंचा सकता है। प्रदेश में वर्तमान में प्रतिवर्ष लगभग 5000 टन ई-कचरा उत्पन्न हो रहा है, जबकि वर्ष 2019 में यह आंकड़ा मात्र 500 टन था। हालांकि ई-कचरे के सटीक आकलन का कोई मानक फॉर्मूला नहीं है और आंकड़ों में पूरी स्पष्टता नहीं है। इंदौर में 800 टन, भोपाल में 415 टन, ग्वालियर में 400 टन और उज्जैन में 315 टन ई-कचरा प्रतिवर्ष उत्पन्न होने का आंकड़ा है। असली आंकड़ा इससे कई गुना अधिक हो सकता है, क्योंकि हर गली-मोहल्ले में कबाड़ी पुराने फ्रिज, कूलर, मोबाइल और लैपटॉप खरीदकर उन्हें तोड़ते हैं और धातुएं निकालते हैं।*

*ई-कचरा प्रबंधन नियम 2022 के तहत निर्माताओं, उत्पादकों, रीफर्बिशर्स और रीसाइकलर्स की जवाबदेही तय की गई है। खुले में कचरा जलाना, जलाशयों या जमीन पर फेंकना, एसिड से धातुएं निकालना और हाथों से उपकरण तोड़ना बेहद खतरनाक है। बच्चों और गर्भवती महिलाओं को इसके संपर्क से अधिक जोखिम है। सबसे तीखा सवाल यह है कि जब नियम 2022 में बन गए तो छह साल तक सिस्टम क्या कर रहा था? प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड क्या केवल फाइलों में साइन करता रहा? नगर निगम क्या केवल कागज पर कचरा उठाता रहा? यदि भोपाल में केवल दस प्रतिशत ई-कचरा ही वैज्ञानिक तरीके से निस्तारित हो रहा है तो बाकी नब्बे प्रतिशत कहां जा रहा है - हवा में, पानी में या हमारे फेफड़ों में? एनजीटी को हस्तक्षेप करना पड़ा, यह सरकारी तंत्र की निगरानी व्यवस्था पर गंभीर सवाल है।*

*केवल समिति बनाकर रिपोर्ट मांगने से कुछ नहीं होगा। जरूरत है सख्त कार्रवाई की। हर जिले में अधिकृत ई-कचरा संग्रह केंद्र बनाए जाएं। उत्पादक कंपनियां अपने बेचे हुए सामान को वापस लें और वैज्ञानिक तरीके से नष्ट करें। स्कूलों में जागरूकता अभियान चलाए जाएं और नगर निगम अलग से ई-कचरा उठाने की व्यवस्था करे। सबसे बड़ी बात, अवैध रूप से चल रही ढाई सौ स्क्रैप यूनिट्स पर कार्रवाई हो। छह साल में दस गुना बढ़ा ई-कचरा आने वाले वर्षों में और बढ़ेगा। यदि आज नहीं चेते तो यह प्रदूषण हमारी हवा, पानी और मिट्टी को और जहरीला करेगा। एनजीटी ने खतरे की घंटी बजा दी है। अब सरकार को जागना होगा, क्योंकि यह केवल पर्यावरण का मुद्दा नहीं, आने वाली पीढ़ी की सांसों का सवाल है।*

## आजकल

# लाइसेंस रद्द, खून का खेल जारी

रीवा के गांधी मेमोरियल अस्पताल में कल्पना मिश्रा और उसके गर्भस्थ शिशु की मौत ने स्वास्थ्य व्यवस्था की पोल खोल दी है। जांच में सामने आया कि जिस ब्लड सेंटर का लाइसेंस तीन जुलाई को कमियों के कारण निरस्त कर दिया गया था, उसी सेंटर से खून लाने की सलाह अस्पताल के स्टाफ ने परिजन को दी थी। परिजन ने ढाई हजार रुपये देकर खून खरीदा। एक यूनिट खून चढ़ाना शुरू होते ही पांच मिनट में मरीज की तबीयत बिगड़ने लगी और पूरा खून चढ़ने से पहले कल्पना की मौत हो गई।

सबसे बड़ा सवाल यह है कि लाइसेंस रद्द होने के बावजूद संबंधित ब्लड सेंटर का संचालन कैसे जारी रहा? प्रशासन और स्वास्थ्य विभाग को इसकी भनक क्यों नहीं लगी? यदि समय पर सेंटर को बंद और सील कर दिया गया होता तो शायद यह त्रासदी टाली जा सकती थी। मौत के बाद दस्तावेज जब्त कर सेंटर को सील करने की कार्रवाई शुरू करना व्यवस्था की विफलता को ही उजागर करता है।

इस मामले में अस्पताल स्टाफ और निजी ब्लड सेंटर के बीच मिलीभगत की आशंका की भी जांच होनी चाहिए। सरकारी अस्पताल में ब्लड बैंक उपलब्ध होने के बावजूद परिजन को बाहर से खून लाने की सलाह क्यों दी गई? क्या इसके पीछे कमीशन का खेल था? यह गंभीर जांच का विषय है।

यह घटना बताती है कि लाइसेंस और नियमों की कागजी निगरानी पर्याप्त नहीं है। स्वास्थ्य विभाग को प्रदेश में लाइसेंस निरस्त किए गए सभी ब्लड बैंक और पैथोलॉजी सेंटरों का औचक निरीक्षण कर उनकी सूची सार्वजनिक करनी चाहिए। अस्पतालों में भी यह सुनिश्चित किया जाए कि मरीजों को केवल अधिकृत और सुरक्षित स्रोत से ही रक्त मिले।

कल्पना मिश्रा और उसके गर्भस्थ शिशु की मौत को केवल चिकित्सकीय लापरवाही मानकर मामला खत्म नहीं किया जा सकता। जब लाइसेंस रद्द होने के बावजूद कोई सेंटर खून उपलब्ध करा रहा हो और अस्पताल का स्टाफ मरीज को वहीं भेज रहा हो, तो जिम्मेदारी तय करना जरूरी है। प्रशासन को दोषियों पर सख्त कार्रवाई करनी होगी, ताकि किसी और परिवार को ऐसी त्रासदी न झेलनी पड़े।

# मक्का एग्रीमेंट से इस्लामिक नाटो की आहट...

**बांग्लादेश की एंट्री से भारत की पूर्वी सीमा पर नया संकट**

सऊदी, पाकिस्तान और तुर्किये का रक्षा समझौता क्या भारत के लिए 1971 के बाद सबसे बड़ी सामरिक चुनौती है? दुनिया में सुरक्षा गठबंधनों की नई परिभाषा लिखी जा रही है। 18 दिन पहले सऊदी अरब, तुर्किये और पाकिस्तान के बीच पवित्र शहर मक्का में एक ऐसा रक्षा समझौता हुआ है, जिसने दक्षिण एशिया की भू-राजनीति में हलचल मचा दी है। यह समझौता नाटो के अनुच्छेद-5 की तरह है, जिसमें करार है कि तीनों में से किसी एक देश पर हमला सभी पर हमला माना जाएगा। अब इस गठबंधन में कुछ और इस्लामिक देशों के शामिल होने की अटकलें तेज हैं और इनमें सबसे बड़ा नाम है भारत का पड़ोसी बांग्लादेश।

बांग्लादेश के प्रधानमंत्री के सलाहकार हुमायूं कबीर के हालिया बयान ने इस चर्चा को और हवा दी है। उनके अनुसार, ढाका इस मक्का समझौते को लेकर गंभीर है और सऊदी अरब, पाकिस्तान और तुर्किये के साथ आगे बढ़ने के विकल्प पर विचार कर रहा है। कोई औपचारिक ऐलान नहीं हुआ है, लेकिन बांग्लादेश के दो मंत्रियों के बयानों से यह संकेत स्पष्ट है कि मोहम्मद यूनुस की अंतरिम सरकार इस्लामिक सैन्य गठबंधन की ओर देख रही है। मक्का समझौता है क्या और यह इतना खतरनाक क्यों है? इस समझौते को रणनीतिक हलकों में इस्लामिक नाटो कहा जा रहा है। इसके तीन मुख्य स्तंभ हैं। पहला, सामूहिक सुरक्षा - किसी एक सदस्य देश पर बाहरी आक्रमण की स्थिति में सभी सदस्य सैन्य सहायता देंगे। दूसरा, रक्षा उत्पादन और प्रौद्योगिकी साझा करना - तुर्किये ड्रोन तकनीक में आगे है, पाकिस्तान मिसाइल और परमाणु तकनीक में और सऊदी अरब के पास पैसा है। तीसरा, खुफिया जानकारी साझा करना और संयुक्त सैन्य अभ्यास।

भारत के लिए यह खतरनाक इसलिए है, क्योंकि इसके दो सदस्य पाकिस्तान और तुर्किये भारत के खिलाफ खुला रुख रखते हैं। पाकिस्तान कश्मीर मुद्दे पर और तुर्किये ने कई बार संयुक्त राष्ट्र में भारत के खिलाफ बयान दिए हैं। सऊदी अरब अभी तक भारत का सामरिक साझेदार रहा है, लेकिन इस नए गठबंधन में उसका जाना भारत की पश्चिम एशिया नीति के लिए झटका है। बांग्लादेश क्यों शामिल होना चाहता है? हुमायूं कबीर के बयान के मायने क्या हैं? बांग्लादेश के प्रधानमंत्री के सलाहकार हुमायूं कबीर के अनुसार, मक्का समझौते में शामिल होने से बांग्लादेश को तीन फायदे दिख रहे हैं। सुरक्षा की गारंटी-शेख हसीना सरकार के तख्तापलट के बाद बांग्लादेश की सेना में अस्थिरता है और अंतरिम सरकार को लगता है कि एक बड़े सैन्य गठबंधन से उसकी सत्ता को बाहरी वैधता मिलेगी।

आर्थिक मदद-सऊदी अरब बांग्लादेशी मजदूरों का सबसे बड़ा बाजार है और सऊदी फंड से बांग्लादेश को अरबों डॉलर की मदद मिल सकती है। पाकिस्तान और तुर्किये सस्ते हथियार और ड्रोन देने को तैयार हैं। वैचारिक बदलाव - हसीना सरकार के दौरान बांग्लादेश की विदेश नीति भारत-केंद्रित थी। अब यूनुस सरकार इस्लामिक पहचान को आगे करके भारत से दूरी बनाना चाहती है। हुमायूं कबीर का बयान इसी नए इस्लामिक झुकाव का प्रतीक है।

लेकिन ढाका यह भूल रहा है कि इस गठबंधन में शामिल होना उसके लिए आत्मघाती हो सकता है। 1971 में पाकिस्तान ने बांग्लादेशियों पर जो जुल्म किए, उसे बांग्लादेश अभी भूला नहीं है। अब उसी पाकिस्तान के साथ सैन्य गठबंधन करना मुक्ति संग्राम के शहीदों का अपमान होगा।

अगर बांग्लादेश इस इस्लामिक नाटो में शामिल होता है तो भारत के लिए यह तीन मोर्चों की चुनौती बन जाएगी - पश्चिम में पाकिस्तान, उत्तर में चीन और अब पूर्व में बांग्लादेश-पाकिस्तान-तुर्किये का गठबंधन। सामरिक रूप से सबसे बड़ा खतरा सिलीगुड़ी कॉरिडोर यानी चिकन नेक पर है। बांग्लादेश की सीमा से यह कॉरिडोर सिर्फ 33 किलोमीटर चौड़ा है। अगर बांग्लादेश की जमीन से तुर्किये के ड्रोन और पाकिस्तानी सलाहकार भारत की निगरानी करने लगे तो पूर्वोत्तर भारत की सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी। खतरा समुद्री है। सऊदी और तुर्किये की नौसेना बंगाल की खाड़ी में मौजूदगी बढ़ा सकती है, जो भारत की एक्ट ईस्ट नीति और हिंद महासागर में दबदबे को चुनौती देगी।

सबसे बड़ा खतरा वैचारिक है। मक्का समझौता सिर्फ सैन्य नहीं, बल्कि इस्लामिक दुनिया को एक ध्रुव में लाने की कोशिश है। इससे भारत के अंदर भी कट्टरपंथी तत्वों को बढ़ावा मिल सकता है। भारत के पास इस चुनौती से निपटने के लिए चार स्तर पर काम करना होगा। कूटनीतिक-सऊदी अरब को इस गठबंधन से अलग करने की कोशिश। भारत सऊदी का सबसे बड़ा तेल खरीदार है और लाखों भारतीय वहां काम करते हैं। रियाद को समझाना होगा कि पाकिस्तान के साथ गठबंधन उसकी भारत के साथ 100 अरब डॉलर के व्यापार को नुकसान पहुंचाएगा।

बांग्लादेश में लोकतंत्र की बहाली-भारत को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर बांग्लादेश में जल्द चुनाव कराने का दबाव बनाना होगा। एक चुनी हुई सरकार ही इस तरह के खतरनाक समझौते को रोक सकती है।

सैन्य तैयारी-पूर्वी कमान को मजबूत करना, बांग्लादेश सीमा पर ड्रोन रोधी प्रणाली लगाना और म्यांमार के साथ मिलकर बंगाल की खाड़ी में निगरानी बढ़ाना। आर्थिक दबाव-बांग्लादेश भारत पर बिजली, प्याज, अनाज और चिकित्सा सुविधाओं के लिए निर्भर है। भारत को यह स्पष्ट करना होगा कि इस्लामिक नाटो में जाना आर्थिक रूप से महंगा पड़ेगा।

1971 की विरासत बनाम मक्का का नया जाल। मक्का समझौता अभी कागज पर है, लेकिन इसकी परछाई लंबी है। बांग्लादेश के सलाहकार हुमायूं कबीर का बयान बताता है कि ढाका में कुछ ताकतें भारत से बने-बनाए रिश्ते को तोड़कर इस्लामाबाद और अंकारा की ओर देख रही हैं। यह बांग्लादेश की जनता की भावना के खिलाफ है। बांग्लादेश का जन्म पाकिस्तान के खिलाफ लड़े गए युद्ध से हुआ था, किसी इस्लामिक सैन्य गठबंधन से नहीं। भारत को इस स्थिति को भावुकता से नहीं, बल्कि चाणक्य नीति से संभालना होगा। यह समय बांग्लादेश को दुश्मन घोषित करने का नहीं, बल्कि उसे समझाने का है कि उसकी सुरक्षा भारत के साथ है, पाकिस्तान के साथ नहीं। अगर 1971 में इंदिरा गांधी ने पाकिस्तान को दो टुकड़ों में बांटा था तो आज मोदी सरकार को कूटनीति से इस नए इस्लामिक नाटो को बांग्लादेश की सीमा से पहले ही रोकना होगा।

**( नईदुनिया संपादकीय डेस्क )**

# न्यूयार्क से उठा वसुधैव कुटुंबकम् का स्वर और मोहन भागवत का एकता मंत्र

**धर्म का भेद मिटाए मानवता का सेतु**

आज जब पूरी दुनिया धर्म, भाषा और सरहदों के नाम पर बंटी हुई दिखाई देती है, तब न्यूयार्क की धरती से भारत की एक पुरानी आवाज फिर गूंजी है। यह आवाज है कि धर्म अलग हो सकते हैं, लेकिन मानवता एक है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने वन वर्ल्ड, वन ह्यूमैनिटी के मंच से यही बात कही है। यह केवल एक भाषण नहीं है, बल्कि भारतीय चिंतन का सार है, जो हजारों वर्षों से इस धरती पर जीवित है।

सत्य एक है, अभिव्यक्ति अनेक है। भागवत ने अपने संबोधन में कहा कि सत्य एक है, लेकिन अलग-अलग लोग अपनी समझ और दृष्टिकोण के अनुसार उसे अलग-अलग तरीके से व्यक्त करते हैं। हम सब एक ही सॉफ्टवेयर के कैदी हैं, जो हमारे दिमाग में बना है। यानी हमारी परवरिश, हमारी संस्कृति और हमारा अनुभव ही तय करता है कि हम ईश्वर को किस रूप में देखते हैं। कोई उसे मंदिर में देखता है, कोई मस्जिद में और कोई चर्च में, लेकिन देखने वाला दिल तो एक ही है।

उन्होंने कहा कि वे स्वयं कोई धार्मिक विद्वान या धार्मिक अथॉरिटी नहीं हैं, लेकिन जिस समाज में वे काम करते हैं, उसकी परंपरा यह मानती है कि पूजा पद्धतियां अलग हो सकती हैं, पर मानवता की जड़ एक ही है। यही भारत का वह विचार है, जिसने कभी भी किसी को अपने धर्म से बाहर नहीं किया, बल्कि सबको अपने भीतर समा लिया।

2018 के उस सवाल का जवाब, जो आज भी प्रासंगिक है। अपने भाषण में भागवत ने 2018 में नई दिल्ली में हुए एक कार्यक्रम का जिक्र किया। वहां कुछ मुस्लिम नागरिकों ने उनसे पूछा था कि आप हिंदू राष्ट्र की बात करते हैं, क्या इसका मतलब है कि मुस्लिमों को देश से बाहर निकाल दिया जाएगा? तब उन्होंने कहा था, नहीं, यह हिंदुत्व नहीं है। अगर कोई यह सोचता है कि भारत में मुसलमान नहीं होना चाहिए तो वह असल में हिंदू नहीं है। यह वाक्य आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना तब था। हिंदू राष्ट्र का अर्थ अक्सर गलत समझा जाता है। कुछ लोग इसे किसी धर्म विशेष के शासन से जोड़ देते हैं, जबकि इसका अर्थ सांस्कृतिक एकता से है। हिंदुत्व कोई पूजा पद्धति नहीं, बल्कि जीवन पद्धति है, जो कहती है कि सब अपने-अपने तरीके से सत्य तक पहुंच सकते हैं और सबका सम्मान होना चाहिए। भारत में सदियों से यही परंपरा रही है कि यहां सभी धर्म फलते-फूलते रहे हैं। यही कारण है कि भारत को धर्मशाला कहा गया है, जहां हर विचार के लिए जगह है। वसुधैव कुटुंबकम से वन वर्ल्ड, वन ह्यूमैनिटी तक का सफर। भारत के प्राचीन ग्रंथों में कहा गया है कि वसुधैव कुटुंबकम यानी पूरी धरती ही एक परिवार है। आज इसी विचार का आधुनिक रूप वन वर्ल्ड, वन ह्यूमैनिटी है। जब भागवत न्यूयार्क में इस कार्यक्रम को संबोधित कर रहे थे तो उनके शब्दों में यही भाव था कि दुनिया भले ही तकनीक से ग्लोबल विलेज बन गई हो, लेकिन दिलों में अभी भी दीवारें हैं। उन दीवारों को गिराना होगा। उन्होंने कहा कि आज धर्मों को काफी हद तक रीति-रिवाजों और अनुष्ठानों के आधार पर परिभाषित किया जाता है। अनुष्ठान महत्वपूर्ण हो सकते हैं। वे व्यक्ति को आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ाने का माध्यम बन सकते हैं, लेकिन वे लक्ष्य नहीं हैं। लक्ष्य है इंसान को बेहतर इंसान बनाना और समाज को जोड़ना। यदि अनुष्ठान ही धर्म बन जाए तो फिर धर्म बंटवारे का कारण बन जाता है।

दुनिया जल रही है, तब यह संदेश क्यों जरूरी है? आज की दुनिया की हकीकत क्या है? ईरान में छह महीने से युद्ध चल रहा है, समाधान निकलता नहीं दिख रहा। गैस की ऊंची कीमतों से दुनिया जूझ रही है। अमेरिका में राजनीतिक ध्रुवीकरण बढ़ रहा है, यूरोप में शरणार्थी संकट है और एशिया में धार्मिक टकराव की खबरें आती रहती हैं। ऐसे में यदि कोई कहे कि धर्म अलग हो सकते हैं, लेकिन मानवता एक है तो यह केवल आदर्शवाद नहीं, बल्कि जीने का व्यावहारिक मंत्र है। जब धर्म के नाम पर हिंसा होती है तो असल में धर्म की हार होती है और अहंकार की जीत होती है। धर्म तो जोड़ने के लिए होता है, तोड़ने के लिए नहीं। यदि हम यह मान लें कि मेरा रास्ता ही एकमात्र सही रास्ता है तो फिर संवाद खत्म हो जाता है और संघर्ष शुरू हो जाता है। लेकिन यदि हम यह मान लें कि सत्य एक है और रास्ते अनेक हैं तो फिर संवाद की गुंजाइश बनती है और यही संवाद शांति की नींव है।

मोहन भागवत की यह यात्रा तीन देशों की वैश्विक यात्रा का पहला चरण है और इसकी शुरुआत अमेरिका से हुई है। यह संयोग नहीं है कि यह यात्रा ऐसे समय में हो रही है, जब दुनिया भारत की ओर देख रही है। भारत वह देश है, जिसने कभी किसी दूसरे देश पर धर्म के नाम पर आक्रमण नहीं किया, जिसने कभी किसी को अपना धर्म मानने के लिए मजबूर नहीं किया और जिसने हमेशा कहा कि एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति यानी सत्य एक है, विद्वान उसे अलग-अलग नामों से पुकारते हैं।

आज दुनिया को इसी ज्ञान की जरूरत है। पश्चिमी दुनिया ने वन वर्ल्ड का सपना तो देखा, लेकिन उसे बाजार और व्यापार से जोड़ दिया। भारत कह रहा है कि वन वर्ल्ड तभी बनेगा, जब वन ह्यूमैनिटी का भाव जगेगा। जब तक दिल नहीं जुड़ेंगे, तब तक बाजार नहीं जुड़ सकता। धर्म और मानवता में कोई टकराव नहीं है। टकराव है संकीर्णता और उदारता में, टकराव है अहंकार और विनम्रता में। मोहन भागवत का संदेश हमें याद दिलाता है कि पूजा पद्धति बदल सकती है, भाषा बदल सकती है, रीति-रिवाज बदल सकते हैं, लेकिन भूख, प्यास, प्रेम, करुणा और पीड़ा सबकी एक जैसी है और इसी एक जैसी भावना का नाम मानवता है। यदि हम इस एकता को समझ लें तो धर्म हमारे लिए बोझ नहीं, बल्कि उत्सव बन जाएगा और यदि हम इसे न समझें तो धर्म के नाम पर दुनिया जलती रहेगी। इसलिए जरूरत है कि हम धर्म को दीवार न बनाकर सेतु बनाएं और यही सेतु हमें एक बेहतर दुनिया की ओर ले जाएगा, जहां धर्म अलग हो सकते हैं, लेकिन मानवता एक रहेगी।

**( नईदुनिया संपादकीय डेस्क )**

# डामर बिछा, सुरक्षा गायब - सड़कों पर कब थमेगा मौत का सफर

**राजगढ़ हादसा : लापरवाही और सड़क निर्माण के मानकों पर बड़ा सवाल**

कभी-कभी एक हादसा केवल एक हादसा नहीं होता, बल्कि पूरी व्यवस्था की आंख खोलने वाला दस्तावेज बन जाता है। राजगढ़ के घुमावदार ब्रिज पर हुआ हादसा भी कुछ ऐसा ही है। लखनऊ से इंदौर आ रही एक स्लीपर बस तेज रफ्तार में अनियंत्रित होकर सुरक्षा दीवार से टकराई और चार लोगों की जान चली गई। पहली नजर में यह ड्राइवर की गलती या तेज रफ्तार का नतीजा लग सकता है, लेकिन जब इसकी परतें खुलीं तो पता चला कि गलती केवल स्टीयरिंग पर बैठे व्यक्ति की नहीं, बल्कि सड़क बनाने वाले हाथों की भी है।

हादसे के बाद जब नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक ने प्रदेश की सड़कों की लेखापरीक्षा रिपोर्ट विधानसभा में रखी तो तस्वीर और भी डरावनी निकली। 51 सड़कों के संयुक्त भौतिक निरीक्षण में सामने आया कि अधिकांश सड़कों पर सुरक्षा के बुनियादी मानकों का भी पालन नहीं हुआ है। कहीं घुमावदार हिस्सों पर सड़क को अतिरिक्त चौड़ाई नहीं दी गई तो कहीं तीखे मोड़ों पर जरूरी क्रैश बैरियर ही गायब हैं।

भोपाल, बुरहानपुर और उज्जैन संभाग की तीन सड़कों पर घुमावदार हिस्सों में कैरिजवे की चौड़ाई नहीं बढ़ाई गई। इसका सीधा मतलब है कि मोड़ पर दो वाहन एक साथ सुरक्षित तरीके से नहीं निकल सकते और टकराव की संभावना कई गुना बढ़ जाती है। यही नहीं, 13 संभागों के 26 सड़क कार्यों में 404.75 किलोमीटर लंबी सड़कों पर रिफ्लेक्टिव थर्मोप्लास्टिक मार्किंग ही नहीं मिली, जिन पर 478.27 करोड़ रुपये खर्च हुए हैं। रात के अंधेरे में जब सड़क पर सफेद पट्टी नहीं चमकेगी तो ड्राइवर को सड़क की सीमा का अंदाजा कैसे लगेगा?

सबसे गंभीर बात यह है कि नौ संभागों के 20 सड़क कार्यों में आवश्यकता होने के बावजूद क्रैश बैरियर नहीं लगाए गए हैं। नियम कहता है कि जहां तटबंध की ऊंचाई तीन मीटर से अधिक हो, जहां तीखा मोड़ हो, जहां पुल हो या सड़क किनारे कोई स्थायी बाधा हो, वहां क्रैश बैरियर अनिवार्य है, ताकि दुर्घटना की स्थिति में वाहन को नियंत्रित दिशा में रखा जा सके और वह खाई में न गिरे।

लेकिन जांच में पाया गया कि कई ऊंचे तटबंधों पर यह सुरक्षा कवच ही नहीं था। ऐसे में यदि कोई वाहन संतुलन खोए तो उसके पास बचने का कोई साधन ही नहीं रहता। राजगढ़ का वह घुमावदार ब्रिज, जिस पर हादसा हुआ, उसकी अधिकतम गति सीमा 35 किलोमीटर निर्धारित है। लेकिन क्या वहां स्पष्ट साइन बोर्ड थे? क्या रिफ्लेक्टिव टेप लगे थे? क्या क्रैश बैरियर की ऊंचाई और मजबूती मानकों के अनुरूप थी? पुलिस ने प्रथम दृष्टया तेज गति को कारण बताया और एनएचएआई ने डिजाइन में कोई तकनीकी कमी नहीं होने की बात कही, लेकिन कैग की रिपोर्ट कुछ और ही कहानी कहती है। सड़क सुरक्षा ऑडिट अक्सर केवल कागजों पर होता है, जमीन पर उसकी परछाई भी नहीं दिखती।

सड़कों की इस खतरनाक डिजाइन के पीछे एक पूरा अर्थशास्त्र भी काम करता है। ठेकेदार लागत बचाने के लिए सुरक्षा उपायों में कटौती कर देता है और विभागीय अधिकारी बिना भौतिक सत्यापन के बिल पास कर देते हैं। सड़क बन जाती है, फोटो खिंच जाती है, उद्घाटन भी हो जाता है, लेकिन सुरक्षा अधूरी रह जाती है। जब तक कोई बड़ा हादसा नहीं होता, तब तक कोई इसकी सुध नहीं लेता। राजगढ़ हादसे ने इसी लापरवाही को उजागर किया है।

आज मध्य प्रदेश में 12 हजार किलोमीटर से अधिक स्टेट हाइवे का जाल है। सरकार हर साल सड़कों पर हजारों करोड़ खर्च करती है, लेकिन यदि सड़कें ही सुरक्षित नहीं हैं तो इस खर्च का क्या मतलब है? सड़क का काम केवल गिट्टी और डामर बिछाना नहीं है, बल्कि उसे सुरक्षित बनाना भी है।

सुरक्षित सड़क वह है, जहां मोड़ वैज्ञानिक तरीके से डिजाइन हो, जहां अतिरिक्त चौड़ाई हो, जहां हर 100 मीटर पर रिफ्लेक्टर हो, जहां तटबंध पर क्रैश बैरियर हो और जहां गति सीमा के बोर्ड स्पष्ट रूप से दिखें। सड़कें सफर के लिए हैं, मौत के लिए नहीं।

राजगढ़ हादसे के बाद सरकार ने सभी सड़कों के सुरक्षा ऑडिट का आदेश दिया है। यह स्वागत योग्य कदम है, लेकिन ऑडिट केवल औपचारिकता नहीं होना चाहिए। इसके लिए स्वतंत्र एजेंसी से जांच होनी चाहिए और जांच रिपोर्ट को सार्वजनिक किया जाना चाहिए। साथ ही जिम्मेदारी भी तय होनी चाहिए।यदि किसी सड़क पर डिजाइन की कमी से हादसा होता है तो ठेकेदार और संबंधित इंजीनियर पर आपराधिक मामला दर्ज होना चाहिए। केवल मुआवजा बांटने से काम नहीं चलेगा।

साथ ही सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय के मानकों का कड़ाई से पालन होना चाहिए। जरूरी स्थानों पर क्रैश बैरियर लगाना, सड़क सुरक्षा ऑडिट को प्रभावी बनाना और रिफ्लेक्टिव मार्किंग को अनिवार्य करना ही वह रास्ता है, जो भविष्य के हादसों को रोक सकता है। राजगढ़ का हादसा हमें एक कड़वा सच बताता है कि हम सड़कें तो बना रहे हैं, लेकिन सुरक्षा भूल रहे हैं। 51 सड़कों की जांच में मिली खामियां केवल आंकड़े नहीं हैं, बल्कि आने वाले हादसों की चेतावनी हैं। यदि अब भी नहीं जागे तो घुमावदार ब्रिज और बिना बैरियर वाली सड़कें इसी तरह जान लेती रहेंगी।

जरूरत है कि सड़क को केवल निर्माण की वस्तु न मानकर जीवन की सुरक्षा की गारंटी के रूप में देखा जाए। तभी सफर आसान होगा और सड़कें मौत की डिजाइन नहीं कहलाएंगी।

**( नईदुनिया संपादकीय डेस्क )**